हिन्दी साहित्य विमर्श में गाँधी दर्शन की भूमिका

डॉ . के श्रीलता विष्णु

मानवीय जीवन से जुड़ा कोई ऐसा पक्ष नहीं है जिस पर गाँधीजी की दृष्टि न गई हो। उन्होंने भारत को स्वतंत्र ही नहीं किया अपितु राष्ट्रभाषा का प्रचार , हरिजनोद्धार, महिलाओं का उत्थापन, शैक्षिक मूल्यों में नवनीति, ग्रामोद्धार, मद्य निषेध, अर्थ-नीति, चरखा-खादी आदि का प्रचार इत्यादि कार्य-कलापों से लेकर चालीस करोड़ भारतीयों के राजनैतिक , सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, शैक्षणिक अभ्युत्थान विषयक हर क्षेत्र को अपने प्रभाव से सजग कर दिया।कोई भी चिंतन का महत्व ऐसा ही आंका जाना चाहिए कि वह समसामयिक हो तथा उपादेय हो। महात्माओं के दृष्टिकोण भी इसके अपवाद नहीं है। इस महत्वबोध के प्रकाश में साहित्यिक संदर्भ में गाँधीवाद को आँका जाना प्रासंगिक ही नहीं उचित भी है।

संसार में मनुष्य के सारे क्रिया -व्यापार अपने में स्वयं सिद्ध नहीं है। वे केवल साधन हैं साध्य है जीवन । जीवन में होनेवाली शत सहस्र समस्याओं का समुचित समाधान प्रस्तुत करना सभी कार्यों का अन्तिम ध्येय है। भावाभिव्यक्ति के अनुपम माध्यम होते हुए भाषा और साहित्य भी इससे भिन्न नहीं हो सकते। वे भी सोद्देश्य हैं। जीवन की आधिभौतिकविपन्नताओं का उपचार करने के उपायों को व्यक्त करते हुए मनुष्य को उसकी कठिन परिस्थितियों से संघर्ष करके विजय पा जाने की आत्मनिर्भरता और आशावादिता प्रदान करने के साथ साथ व्यापक आनन्द प्रदान करना ही साहित्य का सच्चा उद्देश्य हो सकता है। "हितेनसहसहितंतस्यभावःसाहित्यम् से भी यही प्रतिपन्न होता है। गाँधीजी कला और साहित्य को उपयोगिता की कसौटी पर कसते थे। साहित्य संबन्धी उनका मन्तव्य था कि " वही काव्य और वही साहित्य चिरंजीवि रहेगा जिसे लोग सुगमता से पा सकेंगे , जिसे वे आसानी से पचा सकेंगे "। उत्तर आधुनिक

एवं उत्तर संरचनात्मक पदावलियों से बोझिल भाषा प्रयोग में रत साहित्यकार्मियों को यह वचन आगाह करता है।

महात्मा ने स्वतंत्रता संग्राम के आरंभ में ही स्पष्ट देखा था कि भारत की गुलामी मुख्यतः तीन प्रकार की हैं , राजनैतिक, आर्थिक और मानसिक। इन तीनों प्रकारों की दासताओं से मुक्ति दिलाने केलिए उन्होंने मुख्यतः तीन प्रकार के कार्यक्रम भी चलाए थे। सत्याग्रह , असहयोग इत्यादिका उद्देश्य राजनैतिक गुलामी का अन्त करना था , खादी, स्वदेशी-व्रत, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार इत्यादि आर्थिक गुलामी से निस्तार पाने के उद्देश्य से चलाए गए थे। वैसे हरिजनोद्धार, राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार , मानसिक स्वाधीनता की प्राप्ति को दृष्टि में रखकर चलाए गए थे। राष्ट्रपिता ने राष्ट्रीयता को देशभर में प्रसारित करने के उद्देश्य से ही हिन्दी को राष्ट्रभाषा रूप में स्वीकार करने का आह्वान किया था। उन्होंने देखा था कि बहुसंख्यक लोगों की भाषा हिन्दी ही पूरे राष्ट्र की सामान्य भाषा हो सकती है और राष्ट्रभाषा के रूप में व्याप्त होकर जनता को संगठित भी कर सकती है। स्वतंत्रता संग्राम के अवसर पर गाँधीजी का यह आह्वान कारगर सिद्ध हुआ था। उनकी प्रेरणा से ही हिन्दी का व्यापक प्रचार दक्षिण देशों में हुआ था जिसने एकात्मता की लहर सब कहीं फैला दी थी।

गाँधीजी एक व्यक्ति नहीं एक दर्शन है। वे सत्य को ईश्वर मानते थे और उनकी प्रबल आस्था थी कि सत्य को अहिंसा द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। अपने ऊंचे सन्देशों तथा आदर्शों से वे विश्व में प्रमुख स्थान पाए। असाधारण रूप से ईमानदार उस युगपुरुष की बड़ी विशेषता यह थी कि जिस कार्य को वे सही समझ लेते थे उसे छोड़ते नहीं थे चाहे उसकेलिए उन्हें कितना भी कष्ट क्यों न उठाना पड़े। अतः वह महापुरुष भारत की आ ज़ादी के इतिहास नायक बने। उन्होंने सत्य और अहिंसा का रास्ता अपनाकर अंग्रेज़ी शासन की जड़ को हिलाकर रखा। अतः वे राष्ट्रपिता बने। प्यार से हम उन्हें बापू कहते हैं और पूरे संसार केलिए वे महात्मा गाँधी रहे और विश्वबंधु कहलाए।

गाँधीजी केलिए समाजवाद का मतलब था सर्वोदय। उन्होंने स्पष्ट घोषणा की थी कि समाजवाद और साम्यवाद का आधार अहिंसा पर तथा मज़दूर और पूंजीपति, ज़मीन्दार और किसान सबके प्रेमपूर्ण व्यवहार पर होना चाहिए। (सर्वोदय पृ ११२) उनके अनुसार आर्थिक असमानता के रहते हुए रामराज्य की कल्पना नहीं कर सकते। उनकेलिए राम का अर्थ था केन्द्रीकरण का निषेध , प्रजा के आधिपत्य पर जोर। सब संप्रदायों के प्रति समभाव रखने की सीख उन्हें तुलसी रामायण से मिली है। "पराधीन सपनेहु सुख नाहीं"चूँकि इसका अनुरणन ही गाँधी मार्ग का प्रमुख ध्ये य रहा। राजनीति के प्रति गाँधी चिंतन का प्रभाव परवर्ती साहित्यकारों पर स्पष्ट भासित है। असुरक्षित राजनैतिक स्थिति पर व्यंग्य बाण चढाते हुए घूमिल ने लिखा था -

"मैं ने गाँधी के तीन बंदरों की हत्या की है।

देश-प्रेम की भट्टी जलाकर

मैं अपनी ठंडीमाँसपोशियों को विदेशी मुद्रा में टाल रहा हूं

फूट पडने के पहले अणुबम के मसौदे को बहसों की प्याली में उबाल रहा हूँ "

(शांतिपात)

भारत में प्रजातंत्रात्मक सरकार के पक्षपाती गाँधीजी के अनुसार प्रत्येक मनुष्य अपना स्वामी होता है और इसके सच्चे स्वरूप का विकास अहिंसा द्वारा ही संभव है। यही उनका रामराज्य था। सन् १९४१ ई में यशपाल ने गाँधीवाद की "शव परीक्षा " लिखकर गाँधीदर्शन कासक्त विरोध किया था। आगे कई मार्क्सवादी विचारधारा के आलोचक गाँधी-चिंतन के स्तुतिपाठक भी बन गए। रामविलास शर्मा जी ने यों लिखा था " भारतीय इतिहास में वह दिन अवश्य आएगा जब वामपक्ष अवसरवाद से मुक्त होगा ,मार्क्सवाद के अनुसार भारत की जातीय समस्या का हल करेगा , स्वयं एकताबद्ध करेगा। मज़दूरों और किसानों की एकता के बल पर इस अर्धऔपनिवेशिक व्यवस्था को बदलने केलिए आगे बढेगा, तब वह गाँधीवाद से हटकर, गाँधीजी की क्रान्तिकारी विरासत पहचानेगा

और राष्ट्रजीवन को चरितार्थ करेगा। (गांधी , अंबेडकर, लोहिया और भारतीय इतिहास की समस्याएँ) गाँधीजी का आर्थिक विचार जॉनरस्किन के विचारों से प्रभावित थे और रस्किन का ग्रंथ "अनटु द लास्ट" का उन्होंने सर्वोदय नाम से अनुवाद भी किया था।

गाँधीजी शिक्षा के द्वारा बच्चों को सच्चे नागरिक बनाना चाहते थे। उनका कहना है -" बच्चे चाहे वर्णमाला लिखें और सांसारिक ज्ञान प्राप्त करें , उसके पहले उन्हें यह जानना चाहिए कि आत्मा क्या है , सत्य क्या है , प्रेम क्या है और आत्मा में शिक्षा पर उन्होंने गंभीरतापूर्वक विचार किया। आज तो शिक्षा का व्यावसायीकरण हुआ है ,सांप्रदायीकरण हुआ है। सामाजिक विज्ञान या इतिहास की पुस्तकों से पूर्वनिर्धारितअजन्डा की पूर्ति का प्रयास चल रहा है। कहना न होगा कि ये कार्य ऐसे देश में चल रहा है जहाँ मानवता को विश्व के आदर्श रूप में प्रस्तुत किया गया हो जहाँ शिक्षा का सबसे बड़ा उद्देश्य चरित्र निर्माण हो।

वर्तमान साहित्य विविधोद्देशी है , प्रकार्यात्मक है। भारतीय संस्कृति , चिंतन पद्धति, आदर्श, आधारभूत मान्यताएँ आदि साहित्य को भी विविधता प्रदान करती हैं। फलस्वरूप समकालिन समीक्षा पद्धति भी कई विमर्शों पर आधृत है। मसलन समीक्षा की कई नई दृष्टियाँ उभरकर सामने आई हैं। दलित , स्त्री, आदिवासी, पारिस्थितिकी, सांप्रदायिकता, वैश्वीकरण आदि विषयों से संबन्धित चर्चाएँ साहित्य की मुख-मुद्रा है। सच तो यह है कि हम इस बात से जाने अनजाने आँखें मूँदते हैं कि इन सारी समस्याओं की आलोचना केलिए भी गाँधीवादी दृष्टि कितना सहायक एवं उपादेय है। इसके बजाय पाश्चात्य सिद्धान्तों द्वारा इन विमर्शों पर गौर करते हैं या परख लेते हैं। ऐसा क्यों ? टेकनोलजी के साथ ही साहित्यिक सिद्धान्तों के लिए भी हम उपनिवेशी बनते जा रहे हैं।

स्वाधीनता आन्दोलन के दौर में हिन्दी साहित्य की मूल चेतना साम्राज्यवादी गुलामी से मुक्ति की आकांक्षा थी ,जब कि वर्तमान दलित साहित्य की मूल चिन्ता वर्णाश्रम समाज व्यवस्था की परतंत्रता से मुक्ति की है। आज जातीय

सामंतवाद पहले की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली है। निचले तबके के लोगों पर गाँधीजी का जो विचार रहा था उस पर बल देकर भी हम दलित साहित्य का मूल्यांकन कर सकते हैं। दलितों की समस्याओं को गाँधीजी अपनी समस्या समझते थे। हरिजनोद्धार गाँधी-धर्म का प्रमुख मुद्दा रहा। गाँधीजी एक ऐसे समाज की रचना करना चाहते थे , जिसमें लोगों को अपने विकास का पूरा अवसर मिलते और जिसमें ऊँच-नीच के भाव नहीं होते। गाँधीजी के मतानुसार किसी की उच्चता जन्म से नहीं होती। उनका मन्तव्य था " मेरा अद्वैतमें विश्वास है। सभी मनुष्य जन्मना समान है , चाहे कोई भारत में या विदेश में क्यों न पैदा हुआ हो। कई शासक अपने को उच्चतर मानते हैं। मैं इसका विरोध करता हूं। मैं ने ऊँच-नीच के इस भाव के विरोध में लड़ाई लड़ी। मुझे यह कहने में प्रसन्नता होती है कि मैं स्वयं भंगी , जुलाहा, किसान और मज़दूर भी हूँ। (हरिजन १५-१२-३३) गाँधीजी के अनुसार अस्पृश्यता कोई सद्धर्म नहीं है। अस्पृश्यता, दया, प्रेम आदि भावनाओं के विपरीत है। मेरे तो कोई टुकड़े टुकड़े कर दे , पर मैं उन पिछड़े लोगों को अपने से अलग नहीं कर सकता। (यंगइन्डिया - ६-१०-२१)

गाँधीजी का लक्ष्य व्यापक मानवता थी। वे दलितों के दुःख-दर्द में समदृष्टि बरतते थे। उनका कहना था " यदि मेरा पुनर्जन्म हो तो मैं अछूत होकर जन्मना चाहूँगा ताकि मैं उनके दुःख दर्द में और उनके अपमान में भाग ले सकूँ और अपने आपको तथा इनको उस दयनीय अवस्था से छुड़ाने का यत्न कर सकूँ आपबीति पर दलितों द्वारा लिखे गए दलित साहित्य का समर्थन भी इन पंक्तियों से पढ़ा जा सकता है। स्वतंत्रता आन्दोलन के बाद के दलित समाज की स्थिति पर "मुक्तिपर्व" उपन्यास की पंक्तियाँ देखिए-" यूँ असमंजस में शहर के दलित भी थे, उन्हें विरासत में दोहरी गुलामी मिली थी । वेकिंकर्त्तव्यविमूढ थे। आखिर उनके दुश्मन कोन हैं ? किससे मार गिराएँ वे , जिससे उन्हें भी गुलामी से छुटकारा मिल जाए। देश के मालिक अंग्रेज़ थे , पर उनके मालिक नवाब , ज़मीन्दार और काश्तकार थे। उनकी हवेली और खेतों पर उन्हें दस-दस बारह -बारह घण्टे कमर तोड़ मेहनत करनी पड़ती थी। तब जाकर उनके परिवार को

रोटी नसीब होती थी। वे गुलाम न थे पर उन्हें गुलामों की तरह रखा जाता था...। (मोहनदासनैमिशराय, मुक्तिपर्व, पृ.१७).

गाँधीजी तथा दलितोद्धारकअंबेदकर की विचारधाराओं की परख भी विशेष मूल्यवान है। गाँधीजी परंपरावादी अधिक था। स्वराज पर दोनों का नज़रिया अलग रहा। अछूतों को गाँधीजी हरिजन नाम से पुकारते थे। बाद में हरिजन शब्द की निन्दा हुई और अब दलित शब्द का ही प्रचलन है। अंबेदकर की साय में स्वराज का अर्थ है सवर्णो का शासन और दलितों की दासता। गाँधीजी अछूतों को हिन्दू समाज का अभिन्न अंग मानते थे। उनका कहना था कि अस्पृश्यता आदि उनकी सारी समस्याएँ केवल उनकी नहीं बल्कि हिन्दू समाज की है समाज को आगे बढ़ना है तो हरिजनों की समस्याओं की उन्मूलन करना होगा। दलित शब्द को पारिभाषित करते हुए दोनों के मौलिक एवं बौधिक विचारों से ओत-प्रोतदृष्टियों की तुलना भी जायज है।

अमूमन स्त्री विमर्श स्त्री समानता की माँग करता है। स्त्री-शिक्षा तथा स्त्री - समानता कभी भी गाँधीजी की आँखों से ओझल नहीं थे। यदि इतिहास की परख करें तो पता चलेगा कि नवोत्थान युग एवं स्वतंत्रता आन्दोलन के अवसर पर पहली बार स्त्री उद्धानकी चर्चा हुई थी। गाँधिजी ने स्त्री-शक्ति को भी स्वाधीनता संघर्ष का अंग माना था। लेकिन स्त्री विमर्शगत चर्चाओं में गाँधिजी के स्त्री विषयक मान्यताओं को नज़र अन्दाज़ कर देते हैं।

दरअसल स्त्री मुक्ति एवं स्त्री उत्थान के संदर्भ में उठे संघर्षों को गाँधीजी की मान्यताओं ने आकूत शक्ति दी है। गाँधीजी ने पुरुषों से अपनी सोच बुलन्द करने की अपील की है और स्त्रियोंको पुरुषों के समकक्ष आकर सारे कार्यक्रमों में भाग लेने का आह्वान किया था। गाँधीजी का विचार सुस्पष्ट था " मैं स्त्री की उचित शिक्षा में विश्वास करता हुँ लेकिन मेरा पक्का विश्वास है कि पुरुष की नकल करके या उसके साथ होड़ लगाकर वह दुनिया में अपना योगदान नहीं कर सकेगी। जितनी सामर्थ्य उसके अंदर है उसे पुरुष का पूरक बनना है।

उन्होंने यह भी जोड़ दिया कि नारियों को अबला पुकारना उनकी आंतरिक शक्ति को दुत्कारना है”।

स्त्रियों ने बिना भेदभाव के स्वाधीनता आन्दोलन में भाग लिया था। गाँधीजी के निमित्त ही काँग्रेस में और पूरे देश के राजनीतिक परिदृश्य पर महिलाओं का हाथपड़ा। गाँधीजी ने सामाजिक परम्पराओं एवं रूढियों में जकड़ी , घर की चहूँदीवारी के भीतर कैद स्त्री को अंग्रेजों के विरुद्ध मोर्चे में सम्मिलित कराया। १९२०-२१ के असहयोग आन्दोलन, १९३० के नमक सत्याग्रह और १९४२ के भारत छोड़ो आन्दोलन में हज़ारों की संख्या में स्त्रियों ने लाठी-गोली का सामना किया और जेल भी गई। स्वतंत्रता पूर्व मताधिकार जितनी आसानी से ५ वर्ष के संघर्ष के बाद स्त्रियों ने प्राप्त किया था , आज भी इसके महत्व से अधिकांश स्त्रियाँ अनभिज्ञ हैं। आधुनिक स्त्री के भीतर नयीअस्मितामूलक मानसिकता पैदा कराने में ऐसी घटनाओं की भूमिका कम नहीं है।

कहा जाता है धर्मनिरपेक्षता भारत का प्राण है। आज हमने “धर्म” शब्द को ही विकल बना दिया है। गाँधीजी का धर्म कोई सांप्रदायिक धर्म नहीं है और न कोई पंथ। धर्म उनकेलिए एक जीवन विधान है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को स्वयं सर्वोच्च सुख और शान्ति मिल सकती है और वह अन्य प्राणियों के सुख और शान्ति का साधक बनता है, बाधक नहीं, चाहे वह उनसे शत्रुता ही क्यों न बरतते हों। अतः उन्होंने सर्व धर्म समभाव पर बल दिया। उनके अनुसार धर्म प्रेम सिखाता है।

देश में हिन्दू मुस्लिम समस्या अंग्रेज़ों के हाथ का हथियार था, जिसे वे राष्ट्रीय आन्दोलन को तोडनेकेलिए इस्तेमाल करते थे। गाँधीजी ने हिन्दी-उर्दू-हिन्दुस्तानी का नारा लगाकर हिन्दुओं और मुसलमानों को मिलाने का प्रयास किया। सांप्रदायिकता के विरोध से निस्तार पाने केलिए उन्होंने इन भाषाओं का समर्थन किया था। साथ ही मातृभाषा को महत्व देकर प्रान्तीय भाषाओं की रक्षा की बात करके देश भर के भाषा विरोध को भी उन्होंने मिटाना चाहा।

न हिन्दू न मुसलमान की धर्म मैत्री की आवाज़ बने क्रान्तिदर्शी कबीर उनकेलिएप्रियतर रहे। उनके कंठों से मुखरितनरसीमेहता के भजन " वैष्णव जन तो तैने कहिये जे पीड़ पराई जाणे रे। परदुःखे उपकार करेतोये मन अभिमाणन आणे रे " को उन्होंने सच्चे धार्मिक भक्त की व्याख्या माना। गाँधीजी के अनुसार धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र का अपना कोई धर्म नहीं है। किसी एक धार्मिक परंपरा में मात्र विश्वास रखना ऐसे राष्ट्र केलिए अनुचित है। सांप्रदायिक सद्भाव पर अटल रहकर ही वे अपना जीवन खो बैठे।

आधुनिक कहानीकार सुशान्तसुप्रिय की कहानी"कबीरदास" में सांप्रदायिक दंगे का चित्रण हमें सोचने केलिए विवश कर देते हैं कि हमारे देश की गति अब भी किस और है? " इस पूरे कांड के दौरान वहाँ एक भी पुलिसवाला नज़र नहीं आया। अलबत्ता इलाके के कुत्ते एकजुट होकर दंगाइयों पर भौंकरहे थे। वे बिना किसी भेद भाव के हिन्दू दंगाइयों और मुसलमान दंगाइयों - दोनों पर ही समान भाव से भौंकरहे थे। वहां कुत्ते इन्सानों से ज़्यादा सभ्य लग रहे था। वे एक दूसरे को नहीं नोच रहे थे। जबकि इन्सान हैवानियत पर उतारू थे, बहाशिदेरिंदे, बने हुए थे। ईश्वर की रचना स्वयं को खूद ही नष्ट कर रही थी। अल्लाह के बंदे अपने ही पैरों पर कुलहाडी मार रहे थे। दीवारों पर लिखे "जय गुरुदेव, सतयुग आएगा" जैसे नारों पर खून के छींटे पडे थे"।

गाँधीजी के पारिस्थितिक चिंतन को भी हम ने नकारा। पर्यावरण संरक्षण पर उनकी दृष्टि वैश्विक रही थी। उनकी राय में इस पृथ्वी में सभी प्राणियों की आवश्यकता पूर्ति केलिए पर्याप्त साधन है किन्तु लालसाएँ पूरी करने केलिए नहीं। आज के कागज़ बचाओ , पेड़ बचाओ नारा गाँधीजी ने पहले उठाया था। अतः छोटे छोटे कागज़ों को भी वे उपयोग में लाते थे। जंगल के अंधाधुंध नाश के कारण जंगल के असली दावेदार आदिवासी जनता विस्थापन झेल रही हैं। साहित्यिक कृतियों की परिस्थितिजन्य हलचलों की व्यारव्याकेलिए हम पाश्चात्य समीकरणों और सिद्धान्तों को ही अपनाते रहते हैं। प्रेमचन्द से लेकर ज्ञानेन्द्रपति

तक की रचनाओं में गाँधी -दृष्टि का प्रभाव ज़बरदस्त है। मेधा पटकर हो , सुन्दरलालबहुगुणा हो गाँधी दर्शन से प्रभावित ही थे।

समकालीन भारतीय साहित्य पर पाश्चात्य उत्तराधुनिक समीक्षा सिद्धान्तों का उपनिवेशीकरण चल रहा है। जीवन के बाह्याडंबर के साधनों से लेकर अत्रकेलिए भी हम विदेशियों को मूँह ताकते रहते हैं। स्वावलंबन , स्वदेशी जैसे शब्द विस्मृति में चले गए हैं। भारत, भूमण्डलीकरण के दौर में मण्डी में तबदील हुआ है। धनपतियों का विहार केन्द्र है यह वसुधैवमण्डी ।

आज़ादी का मतलब है।
बाज़ार से अपनी पसंद की चीज़ चुनने की आज़ादी।
और आपकी पसंद।
वे तय करते हैं।
जिनके पास हैं उपकरणों का काया बल ।
विज्ञापनों की मायाबल ।
आपकी आजादी पसंद है उन्हें।
चीज़ों का गुलाम बनने की आज़ादी।
(ज्ञानेन्द्रपति, आज़ादी उर्फ गुलामी)

भारतीय सांस्कृतिक उपनिवेश का चित्र इससे भी खोफनाक है। विश्वग्राम , विश्व बाज़ार, विश्व संस्कृति के तीव्र प्रवाहन से उत्पन्न पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति ने भारतीय साहित्य एवंजीवन दर्शन को अपने चंगुल में फँसा दिया है। उपनिवेशन की हालात पर हमें आगाह करते हुए उपनिवेशी सभी साधनों का गाँधीजी ने घोर विरोध किया। सांस्कृतिक उपनिवेशन एवं अपसांस्कृतिक निर्माण से मुक्ति का सलाह देकर उन्होंने आत्मनिरीक्षण पर ज़ोर दिया। उनका निरीक्षण था कि " आत्मावलंबन तथा आत्मनिरीक्षण से ही अपने आपको सुधारना होगा और उपनिवेशी सारी शक्तियों से मुक्त करना होगा "।

गाँधीजी की हत्या के बाद तो उनके चिंतन एवं उनकी दृष्टि की भी हत्या हुई आज़ादी के पचहत्तर वर्ष बाद कृषि प्रधान देश में किसान आत्महत्या

केलिएमज़बूर हो जाते हैं। उदारीकरण और निजीकरण के दुष्प्रभावों के शिकार बने गाँव पर आ धृत कई साहित्यकि कृतियों का सृजन हो रहा है। ग्रामीण विकास के नाम पर हो रहे विनाश का पर्दाफाश कई साहित्यकारों ने चित्रित किया है। विवेकी राय का "नमामि ग्राम" में गाँव की नियति का चित्रण है- " मेरे लोग धीरे-धीरे शहरीसलाम की ओर जा रहे हैं। हल , बैल धीरे-धीरे नहीं रहे, ट्रैक्टर हो गए। खेत फ्लेट हो गए।...और किसान दाल-भात छोड़कर सलाम पर उतर आए। लेकिन इसे आपकी तरह में कोई बड़ा परिवर्तन नहीं मानता हूँ। यह मूलभूत परिवर्तन नहीं है। यह पतन है "। (पृ.१००) गत युगों में किसान का प्रकृति से अटूट संबन्ध रहा था। पारिस्थितिक संतुलन में भी गाँव का बहुत बड़ा हाथ था।

गाँधीजी ग्रामकेन्द्रित विकास के हिमायती थे। उनका दृढ विश्वास था कि गाँव का विकास गाँव में ही होना चाहिए। शहरों से आक्रांत और आतंकित होकर नहीं। परन्तु यु गादृष्टा गाँधीजी की आवाज़ को भारत ने अनसुनी की । उनका वक्तव्य था आ ज़ादी नीचे से शुरू होनी चाहिए। हर एक गाँव में लोगों की हुकूमत या पंचायत का राज होगा। उसके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी। हर गाँव को अपने पाँव पर खड़ा होना होगा, अपनी जरूरत खुद पूरी कर लेनी होगी ताकि वह अपना सारा कारोबार खुद चला सके। (सं.सिद्धराज, महात्मा गाँधी, मेरे सपनों का भारत, पृ.२६, २७)

साहित्य की आलोचना कई सिद्धान्तों एवं विचारधाराओं पर निर्भर है। गाँधीवादी दृष्टि या गाँधी ज्म पर अधिष्ठित समीक्षा समसामयिक पुकार है। गाँधीजी के व्यक्तित्व, चिंतन एवं विचारधारा से निष्पन्न कई गद्य - पद्य रचनाएं हमारे सम्मुख हैं। उनके आदर्श , नैतिकता संबन्धी विचार , मानवता पर ज़ोर, स्त्रियों एवं दलितों का उत्थान आदि मूल्यों को लेकर कई रचनाएँ रची गईं। अस्सी के बाद की विविध विधाओं पर रची कुछ उल्लेखनीय कृतियाँ हैं - गाँधीजी बोले थे (अभिमन्यु अनत) , गोड्से@गाँधी.कॉम(असगरवजाहत), भाई का सत्याग्रह (उदयप्रकाश), है राम (सुशान्तसुप्रिय) , बाज़ार में रामधन (कैलाश वनवासी) ,

उत्तर पटकथा बनाम सुराजेहिन्द (भगवत रावत), १८५७ के डेढ़ सौवें वर्ष में (पंकज राग), गणतंत्र दिवस (ज्ञानेन्द्रपति) , वीर बाज़ार (पंखुरी राय) इत्यादि। इन कृतियों की समीक्षा गाँधीवादी दर्शन से ही मुमकिन हो जाएगी। कहना न होगा कि गाँधीवादी दृष्टि को जनसामान्य तक पहुँचाने में साहित्य कृतियों का योगदान अत्यल्प ही रहा।

वर्तमान सामाजिक , सांस्कृतिक, राजनैतिक तथा साहित्यिक परिप्रेक्ष्य में गाँधीवादीसिद्धान्त उतना ही उपादेय है जो पहले था। मन , वाणी एवं प्रवृत्ति में आनुरूप्यरखनेवाले महात्मा संसार में विरले हैं। देश की सामाजिक , सांस्कृतिक, राजनैतिक प्रवृत्तियों एवं परिवर्तनों की रुख की पहचान का औजार स्वयं , साहित्य है। गाँधीवादी दृष्टिकोण से साहित्य की प्रवृत्तियों की परख को आज हम नकारा या अनदेखा नहीं कर सकते। गाँधीजी के बहुआयामी जनपक्षतर चिंतन एवं संवेदना साहित्य के प्रचलित मानकों को भी निखार सकती है। साहित्यिक सिद्धान्तों को पारिभाषित एवं पुन र्पारिभाषित करके देशी उदात्तता स्थापित करने में ये ज़रूर मददगार रहेंगे इसमें संदेह की गुंजाइश नहीं रहेगा।

" अंगार हार उनका, जिनकी सुन हाँक समय रुक जाता है।

आदेश जिधर का देते हैं, इतिहास उधर झुक जाता है। " (दिनकर, बापु)

डॉ.के.श्रीलता विष्णु

प्रोफसर एवं अध्यक्षा , हिंदी विभाग

श्री शंकराचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय, कालटी,

एर्णाकुलम -683574 केरल ।

मोबैल : 09497273927

ईमेल : sreelathavishnu2018@gmail.com

sreelathavishnu@ssus.ac.in